International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN Number: 2394-7519
IJSR 2014; 1(1): 19-21
© 2014 IJSR
www.sanskritjournal.com
Received: 15-11-2014
Accepted: 18-12-2014

नरसिंह चरण पण्डा
प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
विश्वेश्वरानन्द विश्वबन्धु संस्कृत एवं भारत–भारती अनुशीलन संस्थान,
(सह–सम्पादक, विश्वेश्वरानन्द इण्डोलोजीकल जरनल, पंजाब विश्वविद्यालय)
पंजाब विश्वविद्यालय, साधुआश्रम,
होशियारपुर, पंजाब–146021

Correspondence
नरसिंह चरण पण्डा
प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
विश्वेश्वरानन्द विश्वबन्धु संस्कृत एवं भारत–भारती अनुशीलन संस्थान,
(सह–सम्पादक, विश्वेश्वरानन्द इण्डोलोजीकल जरनल, पंजाब विश्वविद्यालय) पंजाब विश्वविद्यालय,
साधुआश्रम, होशियारपुर, पंजाब–146021

संस्कृत साहित्य में भाग्य और पुरुषार्थ

नरसिंह चरण पण्डा

सारांशिका
मनुष्य एक कर्म प्रिय प्राणी है। कर्म को वह अपना श्रेष्ठ साधन समझता है। क्योंकि कर्म के द्वारा उसको सुख, दुःख और मोक्ष या सद्गति आदि भी प्राप्त होते हैं। भारतीय संस्कृति, भारतीय परंपरा एवं भारतीय शास्त्रों में कर्म का विशद महत्त्व वर्णन मिलता है। अब प्रश्न उठता है क्या मनुष्य कर्म किये बिना रह सकता ? इसका उत्तर उपनिषदों की सारभूत भगवद्गीता में इस प्रकार दिया गया है–

न हि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।।[1]

अर्थात् कोई भी मनुष्य किसी भी काल में क्षणभर भी कुछ न कुछ कर्म किये बिना नहीं रह सकता ; क्योंकि स्वाभाविक प्रकृतिजनित गुण उसे कर्म करने के लिए प्रवृत्त करते ही हैं। यह स्पष्ट है, यदि वह इच्छापूर्वक कर्म नहीं करेगा तो विषय वासना उससे बुरे कर्म कराएगी। यह बात भी लोक प्रसिद्ध है– ''खाली मन शैतान का घर''। निठल्ला मनुष्य, मनुष्य न रहकर शैतान बन जाता है। अतः कर्म के बिना कोई भी नहीं रह सकता।

ऋग्वेद (के एक मन्त्र) में सुभग शब्द का प्रयोग हुआ है–

सेदग्ने अस्तु सुभगः सुदानुर्यस्त्वा नित्येन हविषा य उक्थैः।
प्रिप्रीषति स्व आयुषि दुरोणे विश्वेदस्मै सुदिना सासादिष्टः।।[2]

अर्थात् जो व्यक्ति नित्य हवि प्रदान से और स्तुति वचनों से अपने दुर्लभ मानव जीवन में तुझे सन्तुष्ट करता है, हे अग्ने! केवल वही व्यक्ति सौभाग्यशाली और सच्चा दानी कहलाने योग्य है। इसका प्रत्येक दिन सुदिन होता है, और इसकी प्रत्येक इच्छा यश का रूप धारण करके सफल होती है।

शास्त्रों में भाग्य को अदृष्ट, दैव, अपूर्व आदि नामों से जाना जाता है। अमरकोश ने भाग्य शब्द का पर्यायवाची (शब्द) निम्न प्रकार दिये हैं :– **''दैवं भागधेयं भाग्यं स्त्री नियतिर्विधिः।**[3] भाग्य शब्द का अर्थ वामन शिवराम आप्टे ने भी fate, destiny, luck, fortune आदि अर्थ किये हैं। इस प्रकार पुरुषार्थ शब्द का अर्थ आप्टे ने (1) Objects of human life (अर्थात् धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष), (2) Human effort, exertion (अर्थात् पुरुषकार) अर्थ किये हैं। अतः पुरुषार्थ शब्द का अर्थ हम प्रयत्न, उद्यम, परिश्रम आदि कर सकते हैं।

भाग्य और पुरुषार्थ का परस्पर सम्बन्ध है। केवल भाग्य के ऊपर निर्भर रहने से कार्य नहीं होता और केवल पुरुषार्थ के ऊपर विश्वास करने या निर्भर करने से भी अगर भाग्य साथ नहीं देता तो कार्य सफल नहीं हो पाता। सनातन धर्म या वैदिक धर्म में हम पुनर्जन्म के ऊपर विश्वास करते हैं। अतः प्रारब्ध के ऊपर भी हम विश्वास रखते हैं। पूर्व जन्म में किया गया कर्म हमारा भाग्य के रूप में फल देता है या भाग्य के रूप में जाना जाता है। अतः पूर्व जन्म का कर्म भाग्य (कहलाता) है और इस जन्म में किया जा रहा कर्म पुरुषार्थ कहलाता है। यह दोनों जब साथ देंगे तब मनुष्य कार्य संपादन कर पाता है या उसको कर्म का फल प्राप्त होता है अन्यथा नहीं।

साधारणतया भाग्य और पुरुषार्थ को हम इस प्रकार भी समझ सकते हैं। जैसे– पुरुषार्थ करने पर भी जब निष्फलता दिखाई देती है और उसका कोई कारण ढूंढने पर पता नहीं चलता तो वहाँ हमें दैव की प्रबलता का पता चलता है। दैव की इस प्रबलता को हम destiny या ''भाग्य'' के रूप में समझ सकते हैं।

भारतीय शास्त्रों में पुरुषार्थ का महत्त्व बताया गया है। पुरुषार्थ करने पर ही कार्य सिद्ध होता है। कुछ लोग पुरुषार्थ को विशेष महत्त्व देकर कार्य सिद्धि के लिए विशेष परिश्रम या उद्योग करते हैं। यदि कठोर परिश्रम के पश्चात् उनकी सुफल मिलता है तो वे पुरुषार्थ को श्रेष्ठ समझते हैं। परन्तु जो लोग

कम परिश्रम करके कार्य में सफलता पा जाते हैं तो वे भाग्य या दैव को श्रेष्ठ मानते हैं। पुरुषार्थ को विशेष महत्त्व देकर भट्टनारायण ने वेणीसंहार नाटक में कर्ण के मुख से कहलवाया है–

दैवायत्तं कुले जन्म मदायत्तं तु पौरुषम्।।[4]

अर्थात् कर्ण के अनुसार किसी कुल विशेष में जन्म लेना दैव या पूर्व जन्मगत कर्म फल के अधीन है और तदनन्तर पुरुषार्थ करना अपने वश की बात है। संस्कृत हितोपदेशकार ने इन दोनों का समन्वय दर्शाते हुए ही कहा है–

यथाः ह्येकेन चक्रेण न रथस्य गतिर्भवति।[5]

पुनश्च याज्ञवल्क्य स्मृति के अनुसार–

(एवं) **तथा पुरुषकारेण विना दैवं न सिध्यति।[6]**

अर्थात् जैसे एक ओर के पहिए से यान नहीं चलता, ठीक वैसे ही पुरुषार्थ के बिना दैव फलदायक नहीं होता। अतः भाग्य और पुरुषार्थ के समन्वय की भावना इतनी स्पष्ट होने पर भी मोहवश या अपने उत्तरदायित्व से बचने के लिए कुछ इस विषय को केवल एक पहलू से ही लेते हैं और काणे की तरह एक ही आँख से देखते हुए भाग्य को महत्त्व देकर कहते हैं–

यद् धात्रा निजभालपट्टलिखितं स्तोकं महद्वा धनं
तत्प्राप्नोति मरुस्थलेऽपि नितरां मेरौ ततो नाधिकम्।
तत् धीरो भव वित्तवत्सु कृपणां वृत्तिं वृथा मा कृथाः
कूपे पश्य पयोनिधावपि घटो गृह्णाति तुल्यं जलम्।।[7]

अर्थात् विधाता या ब्रह्मा ने जिस मनुष्य के ललाट–फलक पर (भाग्य में) जो थोड़ा या अधिक धन लिख दिया है, वह उसे बिना कार्य के ही मरुस्थल में भी सर्वथा प्राप्त कर लेता है और उससे अधिक धन स्वर्णमय सुमेरु, पर्वत पर भी उसे नहीं मिल सकता है। इसलिए हे मनुष्य! धैर्यशाली बनो तथा धनवानों के आगे व्यर्थ अपनी हीन वृत्ति मत दिखाओ। देखो, घड़ा कुएँ में और समुद्र में भी बराबर पानी ग्रहण करता है। अतः अपने भाग्य के अनुसार ही मनुष्य को सब कुछ मिलता है।

नीतिशतक में भतृहरि ने भाग्य को विशेष महत्त्व देकर कहा है– ''मनुष्य का न तो सुन्दर रूप फल देता है, न कुलीनता, न सत् स्वभाव, न विद्या तथा न यत्नपूर्वक परिश्रम के साथ की गयी राजसेवा, प्रत्युत पूर्वजन्म में किये गये तप के द्वारा अर्जित प्रारब्ध ही वृक्ष के समान समय पर निश्चित फल देता है। वस्तुतः मनुष्य का भाग्य ही समयानुसार अवश्य फल देता है और इसके पूर्वकृत ही काम में आते हैं।''8 पूर्वजन्मों में किये गये पुण्य ही मनुष्य को बड़े भयङ्कर जंगल में, रणाङ्गण में, शत्रु, जल एवं अग्नि के बीच, महासमुद्र में, पर्वत की चोटी पर, सुप्तावस्था में, असावधानी की हालत में और विपत्तिग्रस्त होने पर रक्षा करते हैं। अगर मनुष्यों का कोई सहायक है तो वह उसका पहले जन्म में संचित शुभ कर्म ही है। पूर्वजन्म में संचित कर्म ही भाग्य के रूप में फल देता है। भतृहरि ने स्पष्टतया कहा है–

वने रणे शत्रुजलाग्निमध्ये महार्णवे पर्वतमस्तके वा।
सुप्तं प्रमत्तं विषमस्थितं वा रक्षन्ति पुण्यानि पुराकृतानि।।9

सब का कारण प्रारब्ध ही है। मनुष्य जो पूर्व जन्म में किया है उसका कारण वह स्वयं ही है, जिसको हम भाग्य, विधाता या दैव आदि के रूप में समझते हैं। अतः भाग्य बड़ा ही बलवान् है।10 भाग्य को बदलने की शक्ति किसी के पास नहीं हो सकती, अर्थात् वह होकर ही रहेगा। भतृहरि ने पुनः नीतिशतक में भाग्य को विशेष महत्त्व देते हुए कहा है–

पत्रं नैव यदा करीरविटपे दोषो वसन्तस्य किम् ?
नोलूको•प्यवलोकते यदि दिवा सूर्यस्य किं दूषणम् ?
धारानैव पतन्ति चातकमुखे मेघस्य किं दूषणम् ?
यत्पूर्वं विधिना ललाटलिखितं तन्मार्जितुं कः क्षमः ?11

अर्थात् यदि बसन्त ऋतु में करीर वृक्ष पर पत्ता नहीं लगता तो इसमें बसन्त का क्या दोष है ? यदि सूर्य के निकलने पर भी उल्लू को दिन में दिखाई नहीं देता, तो उसमें सूर्य का अपराध नहीं , यदि बादलों के बरसने पर भी चातक के मुख में जल नहीं गिरता तो बादलों की गलती नहीं, अपितु यह सब उन–उन के भाग्य के कारण ही ऐसा होता है, क्योंकि विधि ने जो विधान कर दिया, उसको बदलने की शक्ति किस में है, अर्थात् किसी में नहीं। अतः होनी हर स्थिति में होकर ही रहती है और तब हाथ पैर मारने पर भी कुछ नहीं बनता।

ना भाव्यं भवतीह कर्मवशतो भाव्यस्य नाशः कुतः ?12

भाग्य को प्रधानता देना उचित है। भाग्य जिसका प्रबल है उसका विद्या और पौरुषता अर्थहीन है। वह भाग्य के आधार पर सब कुछ प्राप्त कर लेता है। जैसे कहा गया है–

भाग्यं फलति सर्वत्र न विद्या न च पौरुषम्।।

संसार में कुछ लोग पुरुषार्थ को ही विशेष महत्त्व देते है उनके लिए भाग्य से भी अधिक महत्त्वपूर्ण पुरुषार्थ है। वे कहते हैं अगर भाग्य से आपको कुछ भी नहीं मिलता तो आप पुरुषार्थ के द्वारा उसको अवश्य प्राप्त कर सकते हैं। अतः अनेक विचारकों के अनुसार परिश्रम पर भरोसा करने वाले उद्यमियों को ही धन–सम्पत्ति, सफलता प्राप्त होती है। भाग्य ही सब कुछ है वह तो कामचोरों का ही कथन है। अतः भाग्य की परवाह किए बिना ही अपने सामर्थ्य के अनुसार पूर्ण पुरुषार्थ करना चाहिए। यदि तब भी कार्य नहीं बनता, तो इसका अर्थ है कि करने में कहीं कमी रह गई है अथवा वहां दैव को बली समझना चाहिए। इससे पहले हार नहीं माननी चाहिए, क्योंकि ऐसा करने पर ही वहां उसकी प्रबलता का ज्ञान हो सकता है। अतः हितोपदेश में कहा गया है–

उद्योगिनं पुरुषसिंह मुपैति लक्ष्मीः दैवं हि देयनिति कापुरुषा वदन्ति।
दैवं निहत्य कुरु पौरुषमात्मशक्या, यत्नेकृते यदि न सिद्धति को•त्र दोषः।।13

अथर्ववेद ने स्पष्टतया पुरुषार्थ के ऊपर बल दिया है। पुरुषार्थ या परिश्रम के द्वारा मनुष्य सुफल और विजय प्राप्त कर सकता है। अतः ऋषि ने कहा है–

कृतं मे दक्षिणे हस्ते जयो मे सव्य आहितः।
गोजिद् भूयासमश्वजिद् धनंजयो हिरण्यजित्।।

अर्थात् मेरे दाहिने हाथ में कर्म है और वायें हाथ में विजय है। इन दोनों हाथों से हम गौ, अश्व, धन, भूमि एवं स्वर्ण आदि प्राप्त करने में सफल हो सकते हैं। मैं अपनी इन्द्रियों को जीत कर राष्ट्र का जीतने वाला, धन और स्वर्ण का जीतने वाला बनूँगा। इसी महत् भावना को निम्न मन्त्र द्वारा आगे बढ़ाया गया है–

अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः।
अयं मे विश्वभेषजो•यं शिवाभिममर्शनः।।15

यह मेरा हाथ सौभाग्य युक्त है। अति सौभाग्यशाली यह हाथ सबके लिए सभी रोगों का निवारणकर्त्ता है। यह हाथ शुभ और कल्याणकारी है।

ऐतरेयब्राह्मण में भी पुरुषार्थ के द्वारा धन आदि प्राप्त किये जा सकते हैं। इन्द्र ने रोहित से कहा–

नानाश्रान्ताय श्रीरस्तीति रोहित शुश्रुमः।
पापो नृषद्वरो जनाः इन्द्र इच्चरतः सखा चरैवेति।।16

अर्थात् जो खूब परिश्रम करते हैं लक्ष्मी उन्हीं के लिए है। परिश्रम न करने वालों के लिए लक्ष्मी नहीं है, रोहित मैंने ऐसा सुनाया है जो लोग बैठ कर जाते हैं वे पापी हैं। अतः इन्द्र चलने वालों या परिश्रम करने वालों का मित्र है। ऐतरेय ब्राह्मण में पुरुषार्थ या परिश्रम को विशेष महत्त्व दिया गया है। परिश्रम करने वालों का हर कष्ट मिट जाता है–

पुष्पिण्यौ चरतो जंघे भूष्णुरात्मा फलग्रहिः।
शेरे•स्य सर्वे पाप्मानः श्रमेण प्रपथे हतः चरैवेति।।17

अर्थात् जो चलते हैं उनकी जंघाओं में फूल खिल जाते हैं अर्थात् वे पुष्ट हो जाते हैं। परिश्रम करने वालों को ऐश्वर्य का फल मिलता है। जो पथ में परिश्रम करते हैं उनके सब पाप नष्ट हो जाते हैं।
अतः हम सब को हमेशा कुछ न कुछ उद्योग या परिश्रम या पुरुषार्थ करना चाहिए नही तो हमारा भाग्य भी बैठ सकता है। फलतः हम भाग्यहीन होकर संसार में पड़े रहेंगे। गोपथ ब्राह्मण के अनुसार–

आस्ते भग आसीनस्य ऊर्ध्वोतिष्ठति तिष्ठतः।
शेते निपद्यमानस्य चराति चरतो भगः चरैवेति।।18

अर्थात् जो (मनुष्य) बैठ जाते हैं उसका भाग्य भी बैठ जाता है। जो खड़े हो जाते हैं उनका भाग्य भी खड़ा हो जाता है। जो सो जाते हैं उनका भाग्य भी सो जाता है। अतः जो चलता है, परिश्रम करता है उनका भाग्य भी चलने लगता है, अर्थात् समय पर समुचित फल देता है।
इसलिए हमेशा पुरुषार्थ के द्वारा भाग्य को सजाग रखना चाहिए। जो लोग भाग्य को या प्रारब्ध को अधिक महत्त्व देते हैं वे भी पुरुषार्थ को स्वीकार करते हैं। क्योंकि प्रारब्ध का वास्तविक अर्थ है पुरुषार्थ। हम श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा जो कुछ फल अर्जित करते हैं उनमें से कुछ का हम उसी समय उपभोग कर लेते हैं और कुछ फल शेष बच जाते हैं, वह हमें कालान्तर में प्राप्त हो जाते हैं, उनके लिए हमें अलग से श्रम करने की आवश्यकता नहीं रहती है। उन्हें ही हम प्रारब्ध मानते हैं। वास्तव में प्रारब्ध पुरुषार्थ की सन्तान ही है। अतः इस जन्म में भी पुरुषार्थ के द्वारा आने वाले जन्म को हम फलप्रद तथा श्रेष्ठ बना सकते हैं। सबके मूल में पुरुषार्थ ही है। पुरुषार्थ से ही भाग्य बनता है और भाग्य साथ दें तो सुफल, यश आदि प्राप्त हो जाता है अन्यथा नहीं। संसार के व्यवहार से तो यह सिद्ध होता है कि जो अपने पुरुषार्थ द्वारा भाग्य से टक्कर लेने में समर्थ हैं, वही व्यक्ति दैव की मार से कभी भी दुःखी नहीं होता।

दैव पुरुषकारेण यः समर्थः प्रवाधितुम्।
न दैवेन विपन्नार्थं पुरुष सो•वसौदति।।19

क्योंकि बलवान् प्रयत्न भाग्य को भी बदल देता है। अतः प्रसिद्ध आयुर्वेद ग्रन्थ अष्टांगहृदय में कहा गया है–

बली पुरुषाकारो हि दैवमप्यतिवर्तते।20

आधुनिक युग में हम चारों ओर देखते हैं कि आज के सारे आविष्कार और हर क्षेत्र की सफलतायें एवं उपलब्धियां पुरुषार्थ का ही परिणाम है, अर्थात् यह सब मेहनत (या परिश्रम) की माया है। बिना पुरुषार्थ के प्राप्य सफलता केवल शब्दकोष में ही उपलब्ध होती है। अतः किसी विदेशी विद्वान् ने ठीक ही कहा है– The Dictionary is the only place where success comes before work. But in reality success comes after work or hard work.

निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते हैं कि पुरुषार्थ से ही भाग्य बनता है और भाग्य से पुरुषार्थ ही श्रेष्ठ है। जिस को करने से मानव परम पुरुषार्थ को भी प्राप्त कर सकता है (अर्थात्) धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष यह पुरुषार्थ चतुष्टय, पुरुषार्थ या परिश्रम या प्रबल उद्यम में ही प्राप्त हो सकता है, इसमें लेश मात्र संदेह नहीं है। अतः ठीक ही कहा गया है–

उद्यमेन हि सिद्धयन्ति कार्याणि न मनोरथैः।
न हि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगा।।21

– सन्दर्भ –

1. भगवद् गीता, 3/5
2. ऋग्वेद, 4/4/7
3. अमरकोश, ण्4.28
4. वेणी संहार, 3/37
5. हितोपदेश, प्रस्तावना, 21
6. याज्ञवल्क्य स्मृति, 1.351
7. नीतिशतक,49
8. नैवाकृतिः फलति नैव कुलं न शीलं विद्या•पि नैव न च यत्नकृता•पि सेवा। भाग्यानि पूर्वतपसा खलु संचितानि काले फलन्ति पुरुषस्य यथैव वृक्षाः।। –नीतिशतक, 96
9. तदेव, 97
10. विधिरहो! बलवानिति मे मतिः।। तदेव, 91
11. तदेव, 93
12. तदेव, 101
13. हितोपदेश, प्रस्तावना, 22
14. अथर्ववेद, 7, 52. 8
15. तदेव, 4.13.6.
16. ऐतरेयब्राह्मण, 33.3
17. तदेव, 33.3
18. तदेव, 33.3
19. वाल्मीकि रामायण, अयोध्याकाण्ड, 23.17.
20. अष्टांगहृदय, अ. द.